Research Paper | History | E-ISSN No : 2454-9916 | Volume : 4 | Issue : 4 | April 2018

x<oky e vkinkv dk dkj.k rFkk mldk lkekftd ,oa lkLdfrd ÁHkko

डॉ0 प्रवीन जोशी

असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, राजकीय महाविद्यालय चन्द्रबदनी, टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड).

गढ़वाल एवं कुमाऊँ क्षेत्र के तेरह जिलों को मिलाकर बने भारत वर्ष के 27 वें राज्य उत्तराखण्ड का 53,403 वर्ग किमी0 क्षेत्रफल का 64 प्रतिशत भाग वनों से आच्छादित है। प्राकृतिक सन्तुलन को बनाये रखने वाले संसाधनों में वन एक ऐसा महत्तवपूर्ण कारक है जो कि न केवल मानव जाति कि दिन प्रतिदिन की आवश्यकताओं कि पूर्ति करता है अपितु पर्यावरण संरक्षण, संवर्द्धन एवं वायु मण्डल को स्वच्छ बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उत्तराखण्ड के स्थानीय निवासियों ने प्राचीन समय से ही जल–जंगल–जमीन पर अपना अधिकार माना है और उसे पाने के लिये अनेकों संघर्ष भी किये हैं, किन्तु राज्य बनने के पश्चात् जल–जंगल–जमीन पर स्थानीय निवासियों के परम्परागत अधिकार को बनाये रखने तथा यहॉ के पारिस्थितिकीय तंत्र से ज्यादा छेड़–छाड़ किये बिना राज्य के विकास का वैकल्पिक मार्ग खोजने में हमारी सरकारें अभी तक नाकाम रही हैं। विकास के नाम पर वनों के अनियंत्रित कटाव, अवैज्ञानिक तरीके से सड़कों एवं बाघों के निर्माण हेतु किये जा रहे विस्फोटों, जगह–जगह मलवे के ढेरों, बिना योजना के बन रहे भवनों, जलाशयों एवं परम्परागत कृषि एवं सिंचाई के तरीकों को न अपनाने के कारण उत्तराखण्ड में विगत कही दशकों से भूस्खलन, भू–छरण, चट्टान खिसकने, हिमस्खलन, बादल फटने, भूकम्प तथा बाड़ आदि में निरन्तर वृद्वि हुई है।

विगत तीन दशकों के आपदा के ऑकड़ें (विभिन्न स्रोतों से प्राप्त) :

आपदा वर्ष	आपदा का प्रकार	स्थान	जनहानि
1991	भूकंप	उत्तरकाशी	1000 से अधिक व्यक्ति मृत एवं करोड़ों की हानि
1998	भूस्खलन	मालपा	350 व्यक्ति मृत
1998	भूस्खलन	उखीमठ	200 व्यक्ति मृत तथा मनसना गांव पूर्णतः नष्ट
1999	भूकंप	चमोली	150 व्यक्ति मृत
2002	भूस्खलन	बूढाकेदार	28 लोग मृत तथा अगोंडा गांव नश्ट
2003	भूस्खलन	वरुणावत	दर्जनों भवन एवं होटल नष्ट
2004	भूस्खलन	जखोली	32 लोग मृत
2008	भूस्खलन	अमरूबैंड	17 व्यक्ति मृत
2009	भूस्खलन	मुनस्यारी	43 लोग मृत
2012	भूस्खलन, बाढ़ आदि	उत्तरकाशी, बागेश्वर एवं रुद्रप्रयाग	52 लोग मृत एवं भारी जनधन की हानि
जून 2013	बादल फटना एवं बाढ़	केदारनाथ एवं प्रदेश के समस्त जनपद	इस त्रासदी के वास्तविक आंकडे अभी प्राप्त नहीं हो सके, क्योंकि कंकालों का मिलना बदस्तूर जारी है।
जुलाई 2013	बादल फटना	घाट नंदप्रयाग	12 व्यक्ति मृत एवं काफी जनधन की हानि
जुलाई 2016	बादल फटना	तल्ला जौहार, पिथौरागढ़	21 व्यक्ति मृत एवं अन्य हानि

उत्तराखण्ड मे समय–समय पर हुई इन आपदाओं के लिये जितनी प्रकृति जिम्मेवार है वहीं मानव भी उतना ही उत्तरदायी है, क्योंकि हम पर्यावरणीय पक्ष को नजर अंदाज कर जिस तेजी से केवल अनियत्रित तकनीकी विकास की ओर बढ़ रहे हैं, वास्तव में वही विनाश का मार्ग है (मैठानी, 1991, पृ. 2)। प्राकृतिक आपदाओं के अतिरिक्त उत्तराखण्ड में राज्य निर्माण के बाद कई हजार किमी0 सड़कों के निर्माण हेतु पुरानी तकनीकों के इस्तेमाल से भू–स्खलन की घटनाओं में लगातार बृद्वि हुई है। बांधों तथा सड़कों के निर्माण से उत्पन्न मलवा न केवल उस क्षेत्र की खेती, जैव विविधता एवं प्राकृतिक संसाधनों को ही समाप्त करता है, अपितु रिहायशी ईलाकों के लिये भू–भूस्खलन जनित आपदाओं को भी जन्म देता है। सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर डॉ0 रबी चोपड़ा की अध्यक्षता में बनी विशेशज्ञ कमेटी के अनुसार 'लगभग 24 सुरंग बांधों के निर्माण से नदी तटों पर जमा मलवा तबाही का कारण बना है'। मनुष्य द्वारा विकास के नाम पर वनों का अनियंत्रित कटाव जारी है, जिसके कारण भू–स्खलन, भू–क्षरण तथा चट्टानों के खिसकने की घटनाओं के अतिरिक्त प्राकृतिक जल स्रोतों एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों की कमी भी हो रही है। ऐसी स्थिति में उत्तराखण्ड हिमालय का वन प्रदेश जो कि न केवल देश के लिये रक्षा कवच का कार्य करता है अपितु देश की जलवायु, जल आवश्यकता एवं अन्य प्राकृतिक स्रोतों की आपूर्ति का क्षेत्र भी है, में पर्यावरणीय असंतुलन, प्रदूषण व वनों की घटती हुई संख्या एक गम्भीर चिन्ता का विषय है, 1995 की बीजिंग रिर्पोट में भी पर्यावरणीय असंतुलन के लिये वनों के दोहन को एक मुख्य कारण माना गया है (बीजिंग रिर्पोट–3 नवम्बर, 1995)। दूसरी ओर प्रतिवर्ष उत्तराखण्ड के जंगलों में लगने वाली वनाग्नि भी प्राकृतिक संसाधनों की बृद्वि में बाधक है। चीड़ के जंगलों की बढती संख्या तथा इसमें लगने वाली आग इसके आस–पास या बीच में स्थित उपयोगी वन सम्पदा एवं जैवविविधता को समाप्त करती है, जो कि भू–क्षरण का महत्वपूर्ण कारण बनती है। अतः प्राकृतिक संसाधनों की कमी का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध वनों के विनाश से है। उत्तराखण्ड में सन् 1878 से 1890 के मध्य वनों के सरकारीकरण के फलस्वरूप लगे प्रतिबंधों के विरूद्ध स्थानीय जनता ने रोष सवरूप 1916 से 1920 के मध्य जंगलों में अनेकों बार आग लगाई। सन् 1930 से 1931 के मध्य भी आग लगाने की अनेक घटनायें हुई। इस दौरान 89 अग्निकाण्डों में 38512 एकड़ वन क्षेत्र भस्म हुए (मिश्र, 2013,पृ.144–145)। इसके मध्य वनस्पति एवं अन्य जीव जन्तुओं के नष्ट होने का कोई अनुमान लगाना कठिन है। वर्तमान में भी उत्तराखण्ड के जंगलों में आग लगने की घटनायें प्रतिवर्ष माह मई–जून में बढ़ जाती हैं। अतः वनस्पति विहीन भूमि जीवाश्म की कमी होने के कारण न तो वर्षा की तेज धार को सहन कर पाती हैं और न ही जल को सोख पाती हैं, फलस्वरूप भू–क्षरण एवं भूस्खलन की घटनायें होती हैं, फिर भी आश्चर्यजनक है कि उत्तराखण्ड सरकार द्वारा 2016 में 13 जिलों को आपदा से सुरक्षित करने हेतु 'मल्टी हैजार्ट प्रोफिलिंग' में वनाग्नि को स्थान नही दिया गया है (रीजनल रिर्पोटर, 2017, पृ.–23)। इसके अतिरिक्त नदी घाटियों पर विद्युत कम्पनियों एवं खनन माफियों का कब्जा तथा पर्यटन हेतु ईकोटूरिज्म के नाम पर सड़कों, नदी घाटियों एवं जंगलों का अनियंत्रित दोहन तथा राज्य निर्माण से अब तक लगभग 70 छोटी–बड़ी जल विद्युत परियोजनाओं द्वारा लगभग 1700 वर्ग किलोमीटर जंगल का कटान तथा राज्य सरकार द्वारा लगभग 20000 वर्ग किलोमीटर वन भूमि को अनेक कार्यों हेतु हस्तान्तरण भी इसके लिए जिम्मेदार है (शर्मा, 2016, पृ. –14)। वर्तमान समय में गढ़वाल क्षेत्र में 12 हजार करोड रूपये की लागत से निर्माणाधीन लगभग 900 किमी लम्बी ऑलवेदर रोड के कारण 2160 वर्गमीटर के क्षेत्रफल में जैवविविधता को भारी नुकसान पहुँच रहा है, जिसमें विभिन्न प्रजातियों के लगभग 40000 पेड़ों को काटा जा रहा है तथा सड़क से उत्पन्न लाखों टन मलबा नदी तटों पर जमा किया जा रहा है जिसके कारण बडी संख्या में जड़ी–बूटी, जंगली जानवरों एवं प्राकृतिक जल स्रोत्रों को नुकसान पहुँच रहा है। इस परियोजना में इतने बड़े स्तर पर हो रहे पर्यारणीय नुकसान की भरपाई कैसे होगी? तथा नदी तटों पर जमा मलबा बरसात के मौसम में नई आपदा को जन्म नहीं देगा, इस पर केन्द्र एवं राज्य सरकार के साथ–साथ तथाकथित पर्यावरण मित्र, समाजसेवी एवं हिमालय प्रेमी सभी मौन हैं।

पर्वतीय प्रदेश में ऐसी सरकारी योजनाओं तथा जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण में प्राकृतिक संसाधनों, कृषि योग्य भूमि, स्थानीय आवश्यकताओं, उपयुक्त स्थलीय निरीक्षण, डिजाइन तथा पर्यावरणीय प्रभाव के आंकलन की अनदेखी भी यहां अनेक आपदाओं को आमंत्रण देती है। जिससे जानमाल के साथ–साथ अनेक भवनों, होटलों, पूलों, सड़कों, जीव–जन्तुओं एवं भू–संपदा को क्षति पहुंचती है। इसके अतिरिक्त उत्तराखण्ड प्रदेश में ओलावृष्टि, बाढ, भूकंप, बादल फटना आदि घटनाओं के लिए भी वनों का कटाव जिम्मेवार है। गढ़वाल क्षेत्र में अब तक आई बाढ़ें, वनों के अनियंत्रित एवं अनियमित कटाव के कारण जलवायु पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण आई जिसकी पुष्टि वैज्ञानिक शोधों से भी हुई है (किमोठी एवं जुयाल, 1996, पृ.–1391–1405, वॉसन एवं अन्य 2008, पृ. 53–61)। ऐसे ही विनाशकारी बाढ़ केदारनाथ क्षेत्र में 16–17 जून, 2013

Copyright© 2018, IERJ. This open-access article is published under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License which permits Share (copy and redistribute the material in any medium or format) and Adapt (remix, transform, and build upon the material) under the Attribution-NonCommercial terms.

को आई जिसमें लगभग 10000 से अधिक व्यक्तियों की संभावना है तथा लगभग 5000 से अधिक लोगों के लापता होने का अनुमान है यद्यपि सरकारी ऑकड़ें इसके आधे हैं इस भंयकर बाढ़ से जनहानि के अतिरिक्त पशु–पक्षियों एवं जैव–विविधता को हुए नुकसान का आंकलन असंभव है। इस आपदा से 5 लाख से अधिक लोग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुए, लगभग 4200 स्थानों पर सड़कें पूर्णतः अथवा आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त हुई, लगभग 170 पुल या तो बह गये या क्षतिग्रस्त हुए, लगभग 1418 पेयजल योजनायें क्षतिग्रस्त हई, 4200 गांवों में लगभग 2679 पक्के तथा 681 कच्चे घर नष्ट हुए, लगभग 20,000 हेक्टेयर भूमि समाप्त हो गई, लगभग 3758 गांव/शहर विद्युत आपूर्ति से प्रभावित हुए, उत्तराखण्ड के पर्यटन उद्योग को लगभग 12 हजार करोड़ रुपये का नुकसान हुआ, जो कि प्रदेश की जीडीपी का कुल 30 प्रतिशत है। (रौतेला, 2015, पृ.–6, राणा एवं अन्य, 2013, पृ.–1 209, शर्मा एवं अन्य, 2013, पृ. –1252)।

केदारनाथ आपदा के कारण श्रीनगर क्षेत्र में आई बाढ़ ने शहर के निचले हिस्से को भी प्रभावित किया यह बाढ जितनी प्राकृतिक थी उससे कई ज्यादा मानवजनित थी क्योंकि अलकनंदा नदी के दूसरे छोर पर निर्मित श्रीनगर जल विद्युत परियोजना के बांध निर्माण हेतु स्टेट चीफ कंजरवेटर ऑफ फर्म, फारेस्ट एडवाइजरी कमेटी ऑफ एम. ओ. इ.एफ., सेन्ट्रल इम्पॉवर्ट कमेटी एवं रूड़की आई0टी0आई0 द्वारा प्रस्तावित 'मक डिस्पोजल प्लान' की अनदेखी कर नदी तट पर ही जमा टनों मलवा (गाद) बांध द्वारा अचानक छोडे गये पानी में बहता हुआ शहर के निचले हिस्से में स्थित मकानों एवं कृषि भूमि में घुस गया, जिसके कारण अनेक भवनों, मवेशी, कृषि भूमि, आईटीआई एवं एसएसबी सहित अनेक सरकारी भवनों एवं उनमें रखी करोडों की सम्पति को नुकसान हुआ। इस बाढ़ से सबसे अधिक क्षति श्री–क्षेत्र श्रीनगर के 17वीं शताब्दी के प्राचीन मंदिर केशवराय मठ को हुई जो कि स्थानीय प्रशासन एवं सरकारों की अविवेकपूर्ण नीतियों के कारण इस बाढ़ में बह गया। इस प्राचीन मंदिर को बचाने तथा शहर के निचले हिस्से को बचाने हेतु सुरक्षा दीवार एवं अन्य उपायों तथा बांध के डंपिंग जोन को हटाने से संबन्धित मांगों को लेकर स्थानीय जनता ने अनेक आंदोलन, धरना, प्रदर्शन एवं ज्ञापन आदि उन सभी माध्यमों से बांध निर्माण संस्था, स्थानीय प्रशासन एवं सरकार को जगाने का प्रयास किया, किन्तु उनके प्रयास न तो प्राचीन मंदिर और न ही शहर के निचले हिस्से में स्थित आवासीय परिसर तथा कृषि भूमि बचा पायें। उपरोक्त के अतिरिक्त एसएसबी परिसर स्थित आदि गुरू शंकराचार्य द्वारा स्थापित तथा 17वीं शताब्दी में निर्मित शंकरमठ, तिवाड़ी मोहल्ला स्थित बद्रीनाथ मंदिर, ऐजन्सी मोहल्ला स्थित गोरखनाथ मंदिर आदि को भी बहुत क्षति पहुंची। इस आपदा से जहां आईटीआई परिसर जिसके अन्दर करोड़ों की मशीनें तथा अन्य सामग्री अभी भी 10 फीट मलवे में दबे हैं, वहीं अनेक परिवार इस क्षेत्र से पलायन कर गये हैं, जो यहां रह भी रहे हैं उनके भवन मलवे के कारण कमजोर पड़ चुके हैं। आपदा से प्रभावित क्षेत्र के सत्रहा परिवारों में होने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक आयोजनों को भी लम्बे समय के लिये स्थगित करना पडा। इसके अतिक्ति अलकनंदा नदी के दोनों तटों पर स्थित कृषि भूमि पूर्णतः नष्ट हो चुकी है, एसएसबी परिसर में करोड़ों की लागत से बने भवन एवं अन्य सामग्री भी इस मलवे की भेंट चढ गयी। गढ़वाल विश्वविद्यालय के चौरास परिसर स्थित क्रीड़ा मैदान एवं सड़क अभी भी खतरे की जद में हैं। स्पष्ट है कि हम प्राकृतिक आपदाओं को रोक तो नहीं सकते परन्तु मानव जनित हस्तक्षेप को रोककर कम अवश्य कर सकते हैं। अतः भविष्य में इस प्रकार की आपदाओं से बचाव हेतु निम्न उपाय किये जाने की आवश्यकता है–

1. उत्तराखण्ड में किसी भी योजना के क्रियान्वयन से पूर्व यहॉ की भौगालिक परिस्थितियों में पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटक, वनों के संरक्षण एवं संबर्द्धन को प्राथमिकता दी जाय।

2. उत्तराखण्ड के पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्रों का भूगर्भीय एवं भूस्खलन/बाढ़ की दृष्टि से सर्वे करवाकर राज्य के भू–स्खलन जोन, नदी, घाटियों तथा पहाड़ी ढालों पर स्थित बस्तियों, गावों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों एवं आबादी को वहां से सुरक्षित स्थानों में विस्थापित किया जाय।

3. पहाड़ी क्षेत्रों में नदियों के प्रभाव मार्ग को रोककर सुरंग एवं झील आधारित बांधों के स्थान पर लगातार जल प्रभाव में बिना किसी अवरोध के ऐसी लघु विद्युत परियोजनायें निर्मित हों जिनमें पर्यावरण विकास एवं जैविक विविधता के संरक्षण के साथ–साथ स्थानीय सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक हित सुरक्षित रहें।

4. ऐसी परियोजनाओं सड़कों एवं सुरंगों के निर्माण से उत्पन्न मलवे का सही प्रबंध हो, ताकि यह गाद नदियों में न जाये और न ही किसी क्षेत्र में भू–स्खलन का कारण बने साथ ही ऐसी योजनायें जलविद्युत परियोजनाओं के पर्यावरण प्रभाव आंकलन का भाग अवश्य हो।

5. बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के आस–पास किसी भी प्रकार के निवास, कार्यालय, स्कूल, अस्पतालों आदि का निर्माण न करवाया जाय।

6. वैकल्पिक उर्जा स्रोतों का विकास किया जाय।

7. सड़कों का निर्माण ग्रीन कस्ट्रक्सन के आधार पर होना चाहिए जिससे सड़कों के निर्माण से उत्पन्न मलवे को उचित स्थान पर व्यवस्थित कर नयी जमीन का निर्माण हो तथा उस पर यथासीध्र वृक्षारोपण किया जाय।

8. आपदा प्रबंधन के लिए मजबूत आपदा प्रबंधन तंत्र ग्राम स्तर पर सृजित किये जायं।

9. सभी जिलों का आपदा प्रबंधन की दृष्टि से GIS मैप निर्मित किया जाय ।

निष्कर्श :

अतः उपरोक्त तथ्यों से स्पश्ट है कि गढ़वाल क्षेत्र में समय–समय पर आई आपदायें प्रकृति से कई ज्यादा मानवजनित थी। जल, जंगल, जमीन पर पर्यावरणीय पहलू एवं स्थानीय जनभागिता की अनदेखी तथा वनों का अनियंत्रित दोहन भी प्रकृति को इस प्रकार की आपदाओं हेतु आमंत्रण देता है। पर्वतीय क्षेत्रों में सुरंग एवं झील आधारित परियोजनाओं एवं सड़कों के निर्माण हेतु किये जा रहे विस्फोटों तथा इससे उत्पन्न मलवा विभिन्न आपदाओं का कारण बनता है। अतः सरकार को पर्वतीय प्रदेशों हेतु ऐसी परियोजनाओं के निर्माण की अनुमति देनी चाहिए जो मजबूत तकनीकी पक्ष के साथ–साथ राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 के मूल बिन्दु– 'प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर समाज के अनुरूप' तथा स्थानीय पर्यावरणीय प्रभाव, सामाजिक–सांस्कृतिक पहलुओं, आर्थिक आवश्यकताओं, प्राकृतिक संसाधनों एवं जनभावनाओं के अनुकूल हों।

संदर्भ ग्रथ :

1. दृष्टि के दायरे में: बीजिंग रिर्पोट–3 नवम्बर, 1985, पोस्टर भुवनेश्वरी महिला आश्रम अंजनीसैण, टिहरी गढ़वाल ।
2. मैठाणी, गोविन्दानंद; 1991: पर्वतीय पर्यावरण में संरक्षण और विकास का सामंजस्य (मेरे गांव के संदर्भ में), पृष्ठ–27 ।
3. किमोठी, एम. एम. एवं जुयाल एन.; 1996 : इनटरनेशल जर्नल ऑफ रिर्मोटसेंसिंग–17, पृष्ठ–1391–1405।
4. वॉसन, आर. जे. एवं अन्य; 2008 : इनवायरमेंट मैनजमेंट–88, पृष्ठ–53–61।
5. मिश्र, शिवगोपाल; 2013: प्राकृतिक आपदायें, ज्ञान गंगा प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ–144–145।
6. राणा, एन, सुनील सिंह, सुन्दरियाल, वाई. पी. एवं जुयाल एन. 2013, रिसेंट एण्ड पास्ट फलड इन द अलकनंदा वेली; कॉजेज एण्ड कन्सीसक्वैंस, करन्ट साइन्स, भाग–105, अंक–9–10, नवम्बर, पृष्ठ–1209–1212।
7. शर्मा; ए0 के, सूर्य प्रकाश एवं राय, टी.के. एस, 2014: रिस्पोन्स टू उत्तराखण्ड डिजास्टर 2013, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ साइन्टीफिक एण्ड इजीनियरिंग रिसर्च भाग–5, अंक–10 अक्टूबर, 2014, पृष्ठ–251–256।
8. रौतेला; पीयूश, 2015: रिर्पोट ऑफ डिजास्टर मिटिगेशन एण्ड मैनेजमेंट सेन्टर, उत्तराखण्ड।
9. शर्मा, पुरुशोत्तम; 2016: समाधानों को सरकाती सरकार, रीजनल रिर्पोटर; अगस्त, 2016, पृष्ठ–23।
10. आपदायें एवं पलायन, समस्यायें और विकल्प, रीजनल रिर्पोटर; अगस्त, 2017, पृष्ठ–23।